17 जनवरी 2014, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-32 / 2012-14

जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के व्याख्यान प्रतिदिन अब आधे घंटे

जी-जागरण पर

प्रतिदिन प्रातः 6.30 से 7.00 बजे तक

वर्ष : 36, अंक : 20 सम्पादक : पण्डित रतनचन्द भारिल्ल आजीवन शुल्क : 251 रुपये

जनवरी (द्वितीय), 2013 (वीर नि. संवत्-2540) सह-सम्पादक : डॉ. संजीवकुमार गोधा वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

गोष्ठियाँ सानन्द संपन्न

जयपुर (राज.) : **(1)** यहाँ टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय द्वारा होने वाली गोष्ठियों की शृंखला में दिनांक 29 दिसम्बर 2013 को **'ज्ञानी श्रावक की ग्यारह प्रतिमाएं'** विषय पर उपाध्याय वर्ग हेतु एक गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता पण्डित मनीषजी कहान खड़ैरी ने की।

श्रेष्ठ वक्ता के रूप में अभय जैन खड़ैरी (उपाध्याय कनिष्ठ) एवं अमित जैन शाहगढ (उपाध्याय वरिष्ठ) रहे।

गोष्ठी का मंगलाचरण सर्वेश जैन (उपाध्याय कनिष्ठ) एवं संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के कुलभूषण अम्बेकर एवं शुभम जैन ने किया।

(2) दिनांक 4 जनवरी 2014 को **'गुणस्थान विवेचन'** विषय पर शास्त्री वर्ग हेतु एक गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता ब्र. यशपालजी जैन जयपुर ने की।

निर्णायक के रूप में पण्डित सोनूजी शास्त्री जयपुर उपस्थित रहे। श्रेष्ठ वक्ता के रूप में शुभम जैन उभेगांव (शास्त्री प्रथम वर्ष) एवं शुभम मोदी (शास्त्री द्वितीय वर्ष) रहे।

गोष्ठी का मंगलाचरण सौरभ जैन (शास्त्री प्रथम वर्ष) एवं संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के आशु जैन एवं निलय जैन ने किया।

आभार प्रदर्शन पण्डित अनेकान्तजी शास्त्री ने किया।

(3) दिनांक 5 जनवरी 2014 को **'पंच लब्धि - एक चिंतन'** विषय पर शास्त्री वर्ग हेतु एक गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता डॉ. नेमिनाथजी शास्त्री कुम्भोज बाहुबली ने की।

श्रेष्ठ वक्ता के रूप में सुमित जैन (शास्त्री द्वितीय वर्ष) एवं अरविन्द जैन (शास्त्री द्वितीय वर्ष) रहे।

गोष्ठी का मंगलाचरण विकेश जैन (उपाध्याय कनिष्ठ) एवं संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के अंकुर जैन एवं नीशू जैन ने किया। आभार प्रदर्शन पण्डित सोनूजी शास्त्री ने किया।

(4) दिनांक 11 जनवरी 2014 को **'क्रिया-परिणाम-अभिप्राय'** विषय पर शास्त्री वर्ग हेतु एक गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता पण्डित अरुणजी बण्ड ने की।

श्रेष्ठ वक्ता के रूप में अनुभव जैन (शास्त्री प्रथम वर्ष) एवं अच्युतकांत जैन (शास्त्री प्रथम वर्ष) रहे।

गोष्ठी का मंगलाचरण अमोल जैन (शास्त्री द्वितीय वर्ष) एवं संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के सचिन जैन एवं विवेक जैन ने किया। आभार प्रदर्शन पण्डित सोनूजी शास्त्री ने किया।

(5) दिनांक 12 जनवरी 2014 को **'तत्त्वार्थमणिप्रदीप : एक**

(शेष पृष्ठ 4 पर ...)

(आगामी कार्यक्रम...)

जयपुर पंचकल्याणक का द्वितीय वार्षिक महोत्सव

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा फरवरी 2012 में ऐतिहासिक एवं भव्य पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन किया गया था; उस महामहोत्सव की यादें सभी को पुन: ताजा हो जावें, इस हेतु पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का **द्वितीय वार्षिक महोत्सव दिनांक 28 फरवरी से 2 मार्च 2014 तक श्री टोडरमल स्मारक भवन जयपुर में अनेक मांगलिक कार्यक्रमों सहित आयोजित होने जा रहा है।**

इस त्रिदिवसीय महोत्सव में विशिष्ट विद्वानों का प्रवचन, प्रौढ कक्षा व गोष्ठियों के माध्यम से अपूर्व लाभ प्राप्त होगा। इसके अतिरिक्त नित्य-नियम पूजन, जिनेन्द्र भक्ति, सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि का भी आयोजन किया जायेगा।

इस मंगल महोत्सव में पधारने हेतु आप सभी को हार्दिक आमंत्रण है।

सम्पादकीय –

राष्ट्रीय स्वतंत्रता और वस्तु स्वातंत्र्य

– पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे...)

स्वतंत्रकुमार ने पुनः पूछा – '' जगत में छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा कोई भी काम जब बिना कारण के तो होता ही नहीं, जो भी कार्य होता है, उसका कोई न कोई कारण तो होता ही है। जब यह अकाट्य नियम है तो फिर यह क्यों कहा गया है कि 'परमाणु–परमाणु का परिणमन स्वतंत्र हैं, स्व–संचालित हैं, कोई भी किसी कार्य का कर्त्ता–धर्त्ता नहीं है। क्या यह बात परस्पर विरोधी नहीं है?''

समताश्री ने बताया – ''यद्यपि जगत में छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा – कोई भी काम बिना कारण के नहीं होता। जब भी जो कार्य होता है तो कार्य के पूर्व और कार्य के समय कोई न कोई कारण तो होता ही है – यह बात तो निर्विवाद है; परन्तु यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि उन कारण–कार्य सम्बन्धों को मिलने–मिलाने की जिम्मेदारी किसी व्यक्ति विशेष की नहीं है। जब कार्य होता है, तब कार्य के अनुकूल सभी कारण स्वतः अपने आप ही मिलते हैं। चाहे वे काम अकृत्रिम हों, प्राकृतिक हों या कृत्रिम अर्थात् किसी व्यक्ति विशेष के द्वारा किए गये हों। जैसे पत्थर प्राकृतिक है और उसमें उकेरी गई, गढ़ी गई प्रतिमा कृत्रिम है, हीरा प्राकृतिक है और हीरे का हार कृत्रिम है। परन्तु पत्थर और प्रतिमा तथा हीरा और हार – ये दोनों ही कार्य हैं, अतः उनके कारण भी नियम से हैं ही।

वह प्रतिमा और हार हमारी स्थूल दृष्टि में कृत्रिम हैं और पत्थर एवं हीरा अकृत्रिम नजर आते हैं; परन्तु उनके कारण–कार्य की सूक्ष्म दृष्टि से शोध–खोज करने पर हमें ज्ञात होगा कि उन सभी के एक नहीं पाँच–पाँच कारण दावेदार हैं। उदाहरणार्थ देखें – पत्थर को प्रतिमा बनने के संबंध में १. पत्थर का **स्वभाव** कहता है कि 'यदि मैं नहीं होता तो प्रतिमा का अस्तित्व ही नहीं होता। अतः असली कारण तो मैं ही हूँ २. **पुरुषार्थ** कहता – यदि मैं प्रतिमा बनाने की प्रक्रिया सम्पन्न नहीं करता तो प्रतिमा बनती कैसे? ३. **होनहार** का दावा है कि प्रतिमा बनने की होनहार या भवितव्य ही न होती तो प्रतिमा बन ही नहीं सकती थी। ४. **काललब्धि** कहती है – जब प्रतिमा बनने का समय आयेगा तभी तो बनेगी, तुम लोगों की जल्दबाजी करने से क्या होता ? ५. **निमित्त** (कारीगर) कहता है मैं जब छैनी चलाऊँगा, तभी बनेगी न ? कोई जादूगर का खेल तो है नहीं जो जादू से हथेली पर आम उगाने की भाँति बना दे।

पाँचों कारण अपना–अपना कर्तृत्व बताकर अहंकार करते हैं; पर ज्ञानी कहते हैं कि यद्यपि कारणों के बिना कार्य नहीं होता परन्तु जब काम उपादान में अपनी तत्समय की योग्यता से होना होता है, तभी होता है और पाँचों कारण अपनी योग्यतानुसार तब मिलते ही मिलते हैं और जब उपादान की तत्समय की योग्यता से कार्य रूप परिणमित नहीं हो तो एक भी कारण नहीं मिलता। अतः किसी को भी अभिमान करने की कोई गुंजाइश नहीं है। पत्थर की द्रव्य–गुण–पर्यायें पूर्ण स्वतंत्र है। उनमें अन्य द्रव्यों का अत्यन्ताभाव है। लोक की वस्तु व्यवस्था के अनुसार वस्तुओं (द्रव्यों) का न तो सामान्य अंश उपादान कारण होता है और न विशेष अंश, अपितु सामान्य–विशेषात्मक द्रव्य ही उपादान कारण होता है। इसके मूलत: दो भेद हैं १. त्रैकालिक उपादान २. तात्कालिक उपादान। तात्कालिक उपादान के दो भेद हैं, १. अनन्तर पूर्व क्षणवर्ती पर्याय २. तत्समय की योग्यता, तत्समय की योग्यता ही कार्य का असली कारणहै।

अष्ट सहस्त्री ग्रन्थ के कर्त्ता आचार्य विद्यानंद ने इसी भाव को ध्यान में रखकर उपादान कारण को इस प्रकार परिभाषित किया है कि ''जो पर्याय विशिष्ट द्रव्य तीनों कालों में अपने रूप को छोड़ता हुआ भी नहीं छोड़ता है और पूर्व रूप से अपूर्व रूप में वर्तन करता है, वह उपादान है।''[१]

उपर्युक्त कथन से सिद्ध है कि द्रव्य (वस्तु) का केवल सामान्य अंश व केवल विशेष अंश उपादान कारण नहीं होता, बल्कि दोनों अंशों से सहित द्रव्य (वस्तु) ही कार्य का उपादान कारण है।

''द्रव्य सत्स्वभावी है और सत् उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य युक्त है। ध्रौव्य द्रव्य शक्ति है और उत्पाद–व्यय पर्यायशक्ति है।[२]

द्रव्यशक्ति के अनुसार कार्य का नियामक कारण त्रिकाली उपादान है अतः इस अपेक्षा से सत्कार्यवाद का सिद्धान्त सही है; किन्तु केवल द्रव्यशक्ति के अनुसार कार्योत्पत्ति मानने पर कार्य के नित्यत्व का प्रसंग आता है। इस कारण वह कार्य का नियामक कारण नहीं है। तत्समय की योग्यतारूप पर्याय शक्ति ही कार्य का नियामक कारण है और वही पर्याय का कार्य है।

इस प्रकार वास्तविक कारण–कार्य सम्बन्ध एक ही द्रव्य की एक ही वर्तमान पर्याय में घटित होते हैं, उसी समय संयोग रूप जो

१.अष्ट सहस्त्री कालिका ५८ की टीका.....
२.प्रमय कमल मार्तण्ड पृष्ठ – १८७

उस कार्य के अनुकूल परद्रव्य होते हैं, उन्हें उपचार से निमित्त कारण कहा जाता है।

इस कारण उक्त पाँचों कारणों के रहते हुए भी वस्तु स्वातंत्र्य का सिद्धान्त निर्बाध है।''

स्वतंत्रकुमार ने पूछा - ''उपादान कारणों में जो तत्समय की योग्यता रूप कारण की बात तो ठीक है; परन्तु निमित्त कारणों में जो प्रेरक निमित्तों की बात कही जाती है, क्या उनके कारण भी कार्य प्रभावित नहीं होता?

समताश्री ने बताया - ''निमित्त कारण अपने से भिन्न उपादान के परिणमन में सहकारी अर्थात् सहचारी होने पर भी उसका किंचित्मात्र भी कर्ता नहीं है। उपादान कारण पूर्ण स्वतंत्र स्वाधीन व स्वशक्ति सामर्थ्य से युक्त है; क्योंकि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कार्य करने में पूर्णतः असमर्थ है। वस्तुतः उपादानकारण परिणमन शक्ति से रहित है वह कर्ता कहलाने का अधिकारी नहीं हो सकता।[१]

एक कार्य के दो कर्त्ता कदापि नहीं हो सकते तथा एक द्रव्य युगपद-एककाल में दो कार्य नहीं कर सकता। प्रत्येक द्रव्य अपना कार्य स्वतंत्ररूप से स्वयं ही करता है। स्वयं अपनी शक्ति से परिणमित होती हुई वस्तु में अन्य के सहयोग की अपेक्षा नहीं होती, क्योंकि वस्तु की शक्तियाँ पर की अपेक्षा नहीं रखतीं।[२]

इस आधार से हम कह सकते हैं कि यदि उपादान कारण में स्वयं योग्यता न हो तो निमित्त उसे परिणमित नहीं करा सकता। विश्व की समस्त वस्तुएँ (द्रव्य) अपनी-अपनी ध्रुव व क्षणिक योग्यतारूप उपादान सामर्थ्य से भरपूर हैं। कहा भी है -

कालादि लब्धियों से तथा नाना शक्तियों से युक्त द्रव्यों (वस्तुओं) को स्वयं परिणमन करने में कौन रोक सकता है?[३]

कार्य की उत्पत्ति के समय तदनुकूल निमित्त उपस्थित अवश्य रहेंगे किन्तु वे स्वयं शक्ति सम्पन्न उपादान को कार्यरूप परिणमित नहीं कराते।[४] अतः एक द्रव्य दूसरे द्रव्य के कार्य करने में पूर्णतः असमर्थ हैं, अकर्ता हैं। यही वस्तु की स्वतंत्रता है। स्वतंत्र वस्तु व्यवस्था में पर का किंचित् मात्र भी हस्तक्षेप नहीं है।

गणतंत्र ने पूछा - ''निमित्तों को कर्त्ता मानने से क्या-क्या हानियाँ हैं ?''

उत्तर - ''१. निमित्तों को कर्त्ता मानने से उनके प्रति राग-द्वेष की उत्पत्ति होती है।

२. यदि धर्मद्रव्य को गति का कर्त्ता माना जायेगा तो निष्क्रिय आकाशद्रव्य को भी गमन का प्रसंग प्राप्त होगा, जो कि वस्तुस्वरूप के विरुद्ध है।

३. यदि गुरु के उपदेश से तत्त्वज्ञान होना माने तो अभव्यों को भी सम्यग्ज्ञान की उत्पत्ति मानने का प्रसंग प्राप्त होगा।

४. निमित्तों को कर्त्ता मानने से सबसे बड़ी हानि यह है कि अनादि निधन वस्तुयें भिन्न-भिन्न अपनी मर्यादा में परिणमित होती हैं, कोई किसी के अधीन नहीं है। कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती।[१] इस प्रकार वस्तुस्वातंत्र्य के मूल सिद्धान्त का हनन हो जायेगा।

ऐसे अनेक आगम प्रमाण हैं, जिनसे निमित्तों का अकर्तृत्व सिद्ध होता है?

१. तीर्थंकर ऋषभदेव जैसे समर्थ निमित्त की उपस्थिति से भी मारीचि के भव में उपादान की योग्यता न होने से भगवान महावीर के जीव का कल्याण नहीं हुआ तथा महावीर स्वामी के दस भव पूर्व जब सिंह की पर्याय में उनके उपादान में सम्यग्दर्शन रूप कार्य होने की योग्यता आ गई तो निमित्त तो बिना बुलाये आकाश से उतर आये।

२. तीर्थंकर भगवान महावीर जैसे समर्थ निमित्त के होते हुए मंखलि गोसाल का कल्याण नहीं होना था सो ६२ दिन तक भगवान महावीर की दिव्यध्वनि की प्रतीक्षा करने के बावजूद भी जब दिव्यध्वनि खिरने का काल आया तब वह क्रोधित होकर वहाँ से चला गया।

३. नरकों में वेदना व जातिस्मरण को भी सम्यग्दर्शन का निमित्त कह दिया है। इससे सिद्ध होता है कि निमित्त कर्त्ता नहीं है; क्योंकि वेदना तो सबको होती है, फिर सम्यग्दर्शन सबको क्यों नहीं होता?

४. केवली का पादमूल तो बहुतों को मिला, पर सबको क्षायिक सम्यक्त्व नहीं हुआ।

५. शील के प्रभाव से यदि अग्नि का जल हो जाने का नियम हो तो पाण्डवों के शील की क्या कमी थी ? उनके तो अठारह हजार प्रकार का शील था। फिर भी वे क्यों जल गये ? उनके हाथ-पैरों में पहनाये गये दहकते लोहे के कड़े ठंडे क्यों नहीं हुए ?''

स्वतंत्रजी ने पूछा - ''निमित्तों में कर्त्तापने के भ्रम होने के क्या-क्या कारण हैं ?''

---

१. पंचास्तिकाय गाथा १९ एवं गाथा ५४
२. समयसार कलश ह्न ५१ एवं ५४
३. समयसारगाथा ११६-१२० की टीका
४. कार्तिकेयानुप्रेक्षा गाथा २१९

१.मोक्षमार्गप्रकाशक : तृतीय अध्ययन, पृष्ठ ५२

समताश्री ने कहा - ''भ्रम उत्पन्न होने का मूल कारण तो कर्त्ता-कर्म संबंधी भूल ही है। इसके अतिरिक्त - १. निमित्त कारणों का कार्य के अनुकूल होना, २. निमित्तों की अनिवार्य उपस्थिति, ३. निमित्तों का कार्य के सन्निकट होना, ४. आगम में निमित्त प्रधान कथनों की बहुलता, ५. निमित्त-नैमित्तिक संबंधों की घनिष्ठता, ६. कृतज्ञता ज्ञापन की प्रवृत्ति, ७. प्रेरक निमित्तों की अहंभावना, ८. अनादिकालीन परपदार्थों में कर्तृत्वबुद्धि आदि भी भ्रम उत्पन्न करते हैं, ९. जो निमित्त उपादान के पूर्वचर, उत्तरचर एवं सहचर होते हैं, उन निमित्तों में भी सहज ही कर्त्तापन का भ्रम हो जाता है।''

ज्योत्स्ना ने पूछा - ''निमित्तों में कर्त्तापन के भ्रम को मेटने का मुख्य उपाय क्या है ?''

समताश्री ने कहा - भ्रम से उत्पन्न हुई परपदार्थों में कर्तृत्वबुद्धि को मेटने का उपाय भ्रम को दूर करना ही है। जो जिनागम में प्रतिपादित निमित्तों के अकर्तृत्व के सिद्धान्त को भली-भाँति समझने एवं उसमें श्रद्धावान होने से ही दूर हो सकता है। एतदर्थ जिनागम का अध्ययन-मनन-चिंतन करना आवश्यक है।

जिनागम में चारों अनुयोगों में इसप्रकार के उदाहरण उपलब्ध हैं, जिनसे निमित्तों का अकर्तृत्व सिद्ध होता है और यह भली-भाँति स्पष्ट हो जाता है कि परद्रव्यरूप निमित्त आत्मद्रव्य के परिणमनरूप कार्य में सर्वथा अकर्त्ता हैं। वे आत्मा के सुख-दुःख, जीवन-मरण आदि में कुछ भी सहयोग-असहयोग नहीं कर सकते।

जिन्होंने अपने विवेक से मन-मस्तिष्क को खुला रखकर आगम चक्षुओं से वस्तुस्वरूप को निरखा-परखा है, वे उपर्युक्त भ्रमोत्पादक कारणों के विद्यमान रहते हुए भी भ्रमित नहीं होते। उन्हें शीघ्र सन्मार्ग मिल जाता है।

आचार्य अमृतचन्द्र प्रवचनसार गाथा ८७ की टीका में लिखते हैं कि 'जीव के किए हुए रागादि परिणमों का निमित्त पाकर नवीन-नवीन अन्य पुद्गल स्कन्ध स्वयमेव ज्ञानावरणादि कर्मरूप परिणमित हो जाते हैं। जीव इन्हें कर्मरूप परिणमित नहीं करता।'[१]

तात्पर्य यह है कि जीव की तत्समय की योग्यता रूप उपादान-कारण से ही कार्य होता है; क्योंकि द्रव्य या पदार्थ स्वयं परिणमन स्वभावी हैं। उन्हें अपने परिणमन में परद्रव्यरूप निमित्तों की अपेक्षा नहीं होती।''

इस प्रकार प्रवचनोपरांत स्वतंत्रकुमार, गणतंत्रकुमार और ज्योत्स्ना के शंका-समाधान के साथ सभा विसृजित हुई। ●

१. पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, श्लोक : ११-१२

छात्रों के लिये अपूर्व अवसर

सोनगढ (गुज.) : यहाँ श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई द्वारा संचालित श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन विद्यार्थीगृह में इस वर्ष कक्षा 6 (अंग्रेजी एवं गुजराती दोनों माध्यम) में तथा कक्षा 7 व 8 (गुजराती माध्यम) में प्रवेश दिया जा रहा है।

छात्रों के आवास, भोजन, चिकित्सा एवं लौकिक शिक्षण की सम्पूर्ण व्यवस्था नि:शुल्क है। जो छात्र यहाँ रहकर तत्त्वज्ञान के संस्कार प्राप्त करना चाहते हों वे कृपया जनवरी 2014 से आवेदन पत्र मंगाकर 25 मार्च तक भरकर अवश्य भेज दें। ध्यान रहे पूर्व कक्षा में 60 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त छात्र का आवेदनपत्र स्वीकार नहीं किया जायेगा।

प्रवेश योग्य छात्रों को 2 मई से 4 मई 2014 तक तीन दिवसीय प्रवेश पात्रता शिविर में बुलाया जायेगा। जनवरी से आवेदन पत्र वेबसाइट www.vitragvani.com पर भी उपलब्ध होंगे। संपर्क सूत्र : कामना जैन (प्राचार्या), श्री कुन्दकुन्द कहान दिग. जैन विद्यार्थीगृह राजकोट-भावनगर हाइवे रोड़, ग्राम पंचायत के पास, सोनगढ-364250 जिला-भावनगर (गुज.) फोन - (02846)-244510

सर्वोत्तम जैन अल्पसंख्यक संस्थान

जैनसंस्कारों के साथ आधुनिक शिक्षा के उद्देश्य से सन् 1885 में स्थापित श्री ऐलक पन्नालाल दिगम्बर जैन पाठशाला द्वारा संचालित 'वालचंद इन्स्टिट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी' (जैन अल्पसंख्यांक इन्स्टिट्यूट) जैन छात्रों के लिये 50 प्रतिशत आरक्षित है। यह इन्स्टिट्यूट AICTE और CII-2013 के सर्वेक्षण के आधार पर देश में सर्वोत्तम बना है। इस संस्थान को 'ऑल इंडिया कौन्सिल फॉर टेक्निकल एज्युकेशन' एवं 'कॉन्फेडरेशन ऑफ इंडियन इंडस्ट्रीज' द्वारा भारतवर्ष के एक हजार पचास संस्थानों में सर्वश्रेष्ठ घोषित कर 'बेस्ट इंडस्ट्रीज लिंक्ड इन्स्टिट्यूट' का प्रथम पुरस्कार दिया गया है।

(पृष्ठ 1 का शेष...)

अनुशीलन' विषय पर शास्त्री वर्ग हेतु एक गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील ने की।

श्रेष्ठ वक्ता के रूप में जिनेश जैन (शास्त्री द्वितीय वर्ष) एवं साकेत जैन (शास्त्री तृतीय वर्ष) रहे।

गोष्ठी का मंगलाचरण दीपक जैन (उपाध्याय कनिष्ठ) एवं संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के प्रीतिंकर जैन एवं सचिन जैन ने किया। आभार प्रदर्शन पण्डित सोनूजी शास्त्री ने किया।

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो - वीडियो प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें-
वेबसाईट - www.vitragvani.com
संपर्क सूत्र-श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph. : 022-26130820, 26104912, E-Mail - info@vitragvani.com

संस्कार

अब तुम इतने बड़े हुए, अपने पैरों पर खड़े हुए।
कोई तुम्हारा क्या कर लेता, अगर नियम तुम नहीं पालते।।
पानी पीते बिना छना और, बिलछानी भी नहीं डालते।
तुम दिन में या रात में खाते, मंदिर या मदिरालय जाते।।
तुमको रोक रहा था कौन, जो तुम जिनवाणी न गाते ?
पर कुछ न कुछ तो ऐसा है, वरना ! तुम यहाँ कभी न आते।
ये संस्कार ही है तुम्हारे, जो तुम चींटी मार नहीं पाते।।
ये संस्कार अगर न होते, तो तुम हाथी मार खा जाते।
शुभ विचार रख कर जिस मां ने, जो शिशु गर्भ में पाला हो।।
वह शिशु धर्म रखवाला होगा, गोरा हो या काला हो।
जो माताएं अपने बालक को, जिन दर्शन नित करवाएगी।।
वे माताएं बालक के कारण, जग में पूजी जाएगी।
जब शिशु गर्भ में और, माताएं चौपाटी पर जाती है।।
और पाव भाजी, चाट, पकौड़े चौपाटी पर खाती हैं।
वे माताएं औलाद का, जीवन चौपट कर जाती हैं।।
अभिमन्यु को गर्भ में सोचो, कैसे कुछ दिख गया होगा।
भेदन करना चक्रव्यूह का वह, कैसे सीख गया होगा।।
सिद्धों की कुछ लोरी मां से, जो कुन्दकुन्द न सुन पाते।
समयसार के ताने-बाने वह, तीन काल न बुन पाते।।
जब पूत कपूत बना यारो तो, पिता सोच-सोच ऐसे रोता।
हमने बीज बबूल का बोया, तो आम कहां से मिलता।।
सु-संस्कार के अभाव में यारों, कुछ बेटा-बेटी ऐसे होते हैं।
जो खानदान की इज्जत को, बीच-बाजार में धोते हैं।।
जो माताएं बालक को अपने, संस्कार गर्भ में भर देती।
वे बालक इन माताओं को, इस जग में जगमग कर देते।।
मां चाहे तो उसकी बेटी, मैना रानी बन सकती है।
और हर मां अपनी कोख से, सीता रानी जन सकती है।।
डाली को मोड़ दो जैसा चाहो, जब तक नाजुकता होती है।
बाद में वह टूट जाती है, जब वह नाजुकता खोती है।।
कुम्हार तभी तक कुछ कर पाता, जब तक घड़ा चाक पर होता।
और छूट जाय जब तीर धनुष से, फिर वह वापस नहीं होता है।।
और अब तक तो समझ गये होंगे, ये संस्कार कहां से आते हैं।
जैसा बनाए बच्चों को, वह वैसा बन जाते हैं।।

- सिद्धार्थ जैन '' सिंघई '' मुंगावली
(काव्यपाठ प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त कविता)

नववर्ष स्नेह मिलन संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल वीतराग महिला मण्डल की ओर से नववर्ष के उपलक्ष्य में स्नेह मिलन का आयोजन किया गया, जिसमें धर्म की अंताक्षरी रखी गई और भजनों के माध्यम से नववर्ष का स्वागत किया।

अष्टम वार्षिकोत्सव सानंद संपन्न

कलकत्ता : यहाँ श्री दिगम्बर जैन मंदिर पद्मपुकर में दिनांक 31 दिसम्बर 2013 व 1 जनवरी 2014 को श्री महावीर पंचकल्याणक का अष्टम वार्षिकोत्सव अत्यंत हर्षोल्लास के साथ मनाया गया।

इस अवसर पर ब्र. श्रेणिकजी जबलपुर द्वारा प्रात: समयसार एवं सायंकाल मोक्षमार्गप्रकाशक पर प्रवचनों का लाभ मिला।

कार्यक्रम में स्वयंभूस्तोत्र विधान का आयोजन किया गया, जिसके आयोजनकर्त्ता श्री अनिलजी सुभाषजी सुशीलजी सेठी परिवार कोलकाता थे।

इस अवसर पर भव्य दिव्यध्वनि वाचनालय का उद्घाटन श्री दिलीपजी सेठी परिवार कोलकाता ने किया।

विधि-विधान के संपूर्ण कार्य ब्र. श्रेणिकजी जबलपुर द्वारा संपन्न हुये।

वैद्यरत्न की उपाधि

टोडरमल महाविद्यालय के स्नातक विद्वान डॉ. दीपकजी जैन जयपुर को श्री दिगम्बर जैन समाज बापूनगर सम्भाग द्वारा उनके आयुर्वेद चिकित्सा क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान एवं उनके द्वारा लिखित पुस्तकें - 'स्वास्थ्य के अहिंसक नुस्खे' एवं 'अहिंसक आहार : स्वास्थ्य का आधार' के उपलक्ष्य में दिनांक 5 जनवरी 2014 को 'वैद्यरत्न' उपाधि से अलंकृत किया गया।

पद्मनंदी-पंचविंशतिका ग्रन्थ उपलब्ध

आचार्य पद्मनन्दी विरचित **पद्मनन्दी पंचविंशतिका** शास्त्र का प्रकाशन श्री कुन्दकुन्द दिगम्बर जैन स्वाध्याय मण्डल ट्रस्ट, नागपुर द्वारा किया गया है। इसमें धर्मोपदेशामृत, दानोपदेश, अनित्य पंचाशत् आदि विषयों का वर्णन है। इसकी सहयोग राशि 50/- है। प्राप्ति हेतु 07588740963 पर सम्पर्क कर सकते हैं। **- अशोककुमार जैन, मन्त्री**

शोक समाचार

(1) प्रभातपट्टन-बैतूल (महा.) निवासी श्री सुदर्शन कुमार जी शाह का 95 वर्ष की आयु में दिनांक 21 दिसम्बर को पंचपरमेष्ठी के स्मरणपूर्वक शांतपरिणामों से देहावसान हो गया। आपकी स्मृति में 500/- रुपये जैनपथप्रदर्शक हेतु प्राप्त हुये।

(2) उदयपुर (राज.) निवासी श्री कस्तूरचन्दजी सिंघवी का 83 वर्ष की आयु में दिनांक 31 दिसम्बर को शांतपरिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया। आपकी स्मृति में टोडरमल स्मारक के ध्रुवफण्ड हेतु 11 हजार रुपये प्राप्त हुये।

(3) अलवर (राज.) निवासी श्रीमती शान्तिदेवी जैन धर्मपत्नी श्री नेमीचन्दजी जैन का दिनांक 18 दिसम्बर को पंचपरमेष्ठी के स्मरणपूर्वक शांतपरिणामों से देहावसान हो गया। आपकी स्मृति में जैनपथप्रदर्शक एवं वीतराग-विज्ञान हेतु 500-500/- रुपये प्राप्त हुये।

दिवंगत आत्मायें चतुर्गति के दु:खों से छूटकर शीघ्र ही अनंत अतीन्द्रिय आनंद को प्राप्त हों - यही मंगल भावना है।

सिद्धभक्ति

13 पाँचवीं पूजन -डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे...)

तीसरा छन्द इसप्रकार है -

(पद्धरि छन्द)

पर-परिणतिसों अत्यन्त भिन्न, निज परिणतिसों अति ही अभिन्न।
अत्यन्त विमल सब ही विशेष, मल लेश शोध राखो न शेष।।३।।

हे भगवन् ! आप परपरिणति से अत्यन्त भिन्न और निज परिणति से अत्यन्त अभिन्न हो। आपकी सभी पर्यायें अत्यन्त विमल हो गई हैं; क्योंकि आपने सम्पूर्ण मल का शोध कर डाला है, रंचमात्र भी मल या मैल शेष नहीं रखा है।

वैसे तो प्रत्येक आत्मा स्वभाव से ही परपरिणति से पूर्णत: भिन्न और अपनी परिणति से पूरी तरह अभिन्न ही होता है।

हे भगवान्! आप तो स्वभाव के साथ-साथ पर्याय से भी पूर्णत: पवित्र है, मिथ्यात्व और कषाय भावों से रहित हो गये हैं; अपनी अत्यन्त निर्मल परिणति में ही पूर्णत: मगन हैं।

चौथा छन्द इसप्रकार है -

(पद्धरि छन्द)

मणि दीप सार निर्विघन ज्योत, स्वाभाविक नित्य उद्योत होत।
त्रैलोक्य शिखर राजत अखण्ड, सम्पूरण द्युति प्रगटी प्रचण्ड।।४।।

हे सिद्ध भगवान ! आप मणि के दीपक हो, इसकारण आपकी ज्योति भी सभी प्रकार से निर्विघ्न है और स्वाभाविकरूप से नित्य निरंतर प्रकाशित होती रहती है। आप तीन लोक के शिखररूप सिद्धशिला पर अखण्डरूप से विराजमान होकर सुशोभित हो रहे हैं।

उस अखण्ड ज्योति की द्युति सम्पूर्णत: स्वाभाविकरूप से नित्य प्रकाशित होती रहती है और वह ज्योति सम्पूर्ण जगत को प्रकाशित करती रहती है।

जगत में जो दीपक होता है, उसमें तेल-बाती आदि डालने पड़ते हैं और वह बहुत थोड़ी जगह को ही प्रकाशित करता है। पर यह ज्योति मणिज्योति है; अत: निरन्तर निर्विघ्न प्रकाशित होती है।

इसीप्रकार की चर्चा भक्तामर स्तोत्र के एक छन्द में प्राप्त होती है; जो इसप्रकार है -

(वसंततिलका)

निर्धूमवर्तिरपवर्जिततैलपूर:
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ! जगत्प्रकाश:।।१६।।

हे भगवन् ! हे नाथ !! इस जगत को प्रकाशित करनेवाले आप एक अपर जाति के अद्भुत दीपक हो।

जगत के दीपकों को तेल और बाती की जरूरत होती है, उनमें से प्रकाश के साथ-साथ धुआं भी निकलता है और जरा सा हवा का झौंका लगने पर वह बुझ जाता है; किन्तु आप निर्धूम हो, धुएं से रहित हो, बाती की आवश्यकता आपको नहीं है; इसलिए आप बाती से भी रहित हो, आप रूपी दीपक में तेल भी नहीं डालना पड़ता और आप एक साथ सम्पूर्ण जगत को प्रकाशित कर देते हो।

ऐसी आँधी चले कि अचल पर्वत भी चलायमान हो जाय; वह आँधी-तूफान भी आपको बुझा नहीं सकता। इसप्रकार हे भगवन् ! आप कोई अपर जाति के अद्भुत दीपक हो। जिसप्रकार का भाव भक्तामर के इस छन्द में व्यक्त किया गया है; उसीप्रकार का भाव जयमाला के उक्त छन्द में रखने की सफल कोशिश की गई है।

यह तो आप जानते ही हो कि दीपक को जितनी ऊँची और अबाधित जगह पर रखेंगे, वह उतने ही अधिक स्थान को प्रकाशित करता है। आप तीन लोक के सबसे ऊपर सिद्धशिलारूपी शिखर पर विराजमान हो; इसलिए आपका प्रकाश तीन लोक में फैल रहा है।

इसलिए इस छन्द में कहा गया है कि -

त्रैलोक्य शिखर राजत अखण्ड, सम्पूरण द्युति प्रगटी प्रचण्ड।।

पाँचवाँ छन्द इसप्रकार है -

(पद्धरि छन्द)

मुनि-मन-मंदिर को अन्धकार, तिस ही प्रकाशसौं नशत सार।
सो सुलभ रूप पावै न अर्थ, जिस कारण भव-भव भ्रमे व्यर्थ।।५।।

मुनियों के मनरूपी मंदिर में विद्यमान अंधकार का नाश हे सिद्ध भगवान ! आपके ज्ञानरूपी मणिदीप के प्रकाश से ही नष्ट होता है।

जगत के दीपक तो बाहर के अंधकार का पूरी तरह नाश नहीं कर सकते; पर सूर्य का प्रकाश तलघर के अन्धकार का भी नाश कर देता है, किन्तु वह सूर्य भी किसी के मन के अंधकार का नाश नहीं कर सकता।

हे भगवान् ! आपने तो वीतरागी मुनिराजों के मन में विद्यमान अंधकार का भी नाश कर दिया है।

उक्त छन्द की दूसरी पंक्ति में कहा गया है कि उसके बिना वस्तुस्वरूप को सुलभता से प्राप्त करना संभव नहीं है; इसीलिए इस जीव का भव-भव में व्यर्थ ही घूमना होता है।

छठवाँ छन्द इसप्रकार है -

(पद्धरि छन्द)

जो कल्प-काल में होत सिद्ध, तुम छिन ध्यावत लहिये प्रसिद्ध।
भवि पतितन को उद्धार हेत, हस्तावलम्ब तुम नाम देत।।६।।

हे सिद्ध भगवान ! जो जीव कल्पकाल में सिद्ध होते हैं; यदि वे आपका ध्यान क्षण भर भी करें तो वह सिद्धि उन्हें क्षण भर में प्राप्त हो जाती है। गिरे हुए भव्य जीवों के उद्धार के लिए आपका नाम हाथ का सहारा देता है, हस्तावलम्ब है।

बात तो यही परम सत्य है कि जब, जिसको, जिस निमित्तपूर्वक,

जिस विधि से मुक्ति की प्राप्ति होनी है; तभी, उसी को, उसी निमित्त पूर्वक, उसी विधि से मुक्ति की प्राप्ति होगी; पर यहाँ सिद्ध भगवान की विशेष महिमा बताने के लिए यह कह दिया है कि आपका ध्यान करने से क्षणभर में मुक्ति की प्राप्त हो जाती है। यह मात्र उपचरित कथन है। इससे अधिक कुछ नहीं।

यदि कोई अपने आत्मा को न जाने, उसमें अपनापन न करे, उसका ध्यान नहीं करे और यह मान ले कि मैं तो सिद्धों की भक्ति से मुक्ति प्राप्त कर लूँगा तो वह सफल नहीं होगा।

प्रत्येक द्रव्य की अनादिकाल से अनंतकाल तक की प्रत्येक पर्याय का काल अनादि से ही सहज भाव से स्वत: सुनिश्चित है। उसे किसी ने सुनिश्चित नहीं किया है, वह तो सहजभाव से ही सुनिश्चित है। जिसप्रकार प्रत्येक द्रव्य का, प्रत्येक जीव का द्रव्यस्वभाव सुनिश्चित है; उसीप्रकार उसका पर्यायस्वभाव भी निश्चित है।

तात्पर्य यह है कि जिसप्रकार प्रत्येक जीव का त्रिकाली स्वभाव ज्ञानानन्दस्वभावी है; उसमें किसी भी प्रकार का परिवर्तन संभव नहीं है; उसीप्रकार प्रत्येक जीव का या प्रत्येक द्रव्य का पर्याय स्वभाव भी सुनिश्चित है, उसमें भी किसी प्रकार का परिवर्तन संभव नहीं है।

तात्पर्य यह है कि जिस समय, जिसका जो होना निश्चित है; उसका उस समय, वही होगा; - यह सुनिश्चित है और जिसप्रकार द्रव्यस्वभाव में परिवर्तन संभव नहीं, उसीप्रकार पर्यायस्वभाव का अर्थात् जिस समय जो होना है, उसमें भी कोई फेरफार संभव नहीं है।

वस्तुस्वरूप ऐसा होने पर भी व्यवहारनय से ऐसा कहने की परम्परा जिनागम में भी रही है कि हे भगवान ! आप सबका सबकुछ कर सकते हैं; - यह कथन पूर्णत: उपचरित कथन है; क्योंकि भगवान की दिव्यध्वनि में ही इस सत्य का उद्घाटन हुआ है कि **इन्द्र और जिनेन्द्र भी इस जगत में स्वत: होनेवाले परिवर्तनों में कुछ भी परिवर्तन नहीं कर सकते। इन्द्र और जिनेन्द्र भी किसी का कुछ नहीं कर सकते** - यह एकदम पूर्णत: सत्य कथन है। इसके अतिरिक्त और सब मात्र उपचरित कथन हैं।

इस बात का मर्म समझने के लिए जिनागम में कथित निश्चय-व्यवहारनयों का स्वरूप समझना चाहिए। इस विषय में जिसे विशेष जिज्ञासा हो तो उसे लेखक की अन्य कृति 'परमभावप्रकाशक नयचक्र' के निश्चय-व्यवहार संबंधी प्रकरण का अध्ययन करना चाहिए।

सातवाँ छन्द इसप्रकार है -

(पद्धरि छन्द)

तुम गुण सुमिरण सागर अथाह, गणधर सरीख नहीं पार पाह।
जो भवदधि पार अभव्य रास, पावे न वृथा उद्यम प्रयास ।।७।।

तुम्हारें गुणों का स्मरण अथाह सागर के समान है। उसकी गहराई नापने में गणधर सरीखे लोग भी पार नहीं पा सकते हैं।

जिसप्रकार अभव्य जीवों की राशि संसार सागर को पार करने का प्रयास करे तो उसका प्रयास/उद्यम व्यर्थ ही जानेवाला है; उसमें उसे सफलता प्राप्त नहीं होती; उसीप्रकार हे भगवन् ! तुम्हारे गुणों के स्मरणरूप अथाह सागर में गणधर सरीखे भी पार नहीं पा सकते।

यह बात कोई अतिशयोक्ति नहीं है; क्योंकि सिद्ध भगवान में गुण तो अनन्त हैं और गणधरदेव की भी आखिर वाणी तो मर्यादित ही होती है। अत: यह कहना ठीक ही है कि आपके गुणानुवाद में गणधरदेव भी पार नहीं पा सकते।

आठवें और नौवें छन्द इसप्रकार हैं -

(पद्धरि छन्द)

जिन-मुख द्रहसों निकसी अभंग, अति वेग रूप सिद्धान्त गंग।
नय-सप्त भंग कल्लोल मान, तिहुँ लोक वही धारा प्रमान ।।८।।
सो द्वादशांग वाणी विशाल, ता सुनत पढ़त आनन्द रसाल।
यातें जग में तीरथ सुधाम, कहिलायो है सत्यार्थ नाम ।।९।।

हे जिनेन्द्र भगवान ! आपके मुखरूपी सरोवर से अत्यन्त वेगवाली अभंग सिद्धान्तरूपी गंगा नदी निकली है। उसमें सात नयोंरूपी कल्लोलें-तरंगें उठ रही हैं और वह सिद्धान्तरूपी गंगा तीन लोक में प्रवाहित हो रही है।

वह और कुछ नहीं आपके मुख से खिरी द्वादशांग वाणी ही है। उसके सुनने-पढ़ने से अतीन्द्रिय रस भरा आनन्द आता है।

इसी वजह से जगत में गंगा नदी को तीर्थ माना जाता है, सुधाम माना जाता है। यही इसके नाम की सत्यार्थता है।

दिव्यध्वनिरूप जिनवाणी की उपमा गंगा नदी से दी जाती रही है। उसी परम्परा का निर्वाह सहजभाव से यहाँ हो रहा है।

अन्तर मात्र इतना ही है कि अन्यत्र जिनवाणी माँ को गंगा की उपमा दी गई है और यहाँ वीतरागी-सर्वज्ञ भगवान द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों को गंगा कहा जा रहा है।

यदि गंभीरता से विचार करें तो कोई विशेष अन्तर नहीं है; क्योंकि बात मात्र इतनी ही तो है कि यहाँ सिद्धान्त की बात है और वहाँ उनकी वाणी में प्रतिपादित सिद्धान्तों की बात है।

कविवर पण्डित भागचंदजी द्वारा लिखित महावीराष्टक स्तोत्र में भी इसप्रकार का एक छन्द आता है; जिसमें भगवान महावीर की वाणी रूपी गंगा की चर्चा की है। जो मूलत: इसप्रकार है -

(शिखरिणी)

यदीया वाग्गंगा विविधनयकल्लोलविमला,
बृहज्ज्ञानांभोभिर्जगति जनतां या स्नपयति।
इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ।।६।।

हे महावीर भगवन् ! अनेक प्रकार के नयोंरूपी कल्लोलों से अत्यन्त निर्मल; आपकी वाणीरूपी गंगा; ज्ञान के विशाल सागर में

जगत की जनता को स्नान कराती है; वह जिनवाणीरूपी गंगा आज भी, अभी भी बुधजनरूपी हंसों द्वारा भलीभाँति परिचित है। हे भगवान महावीर! आप मेरे नयनों के रास्ते से हृदय में विराजमान हो जावें; मेरे नयनपथगामी होवें।

उक्त छन्द में कविवर भागचंदजी यह कहना चाहते हैं कि हे भगवान महावीर ! आपकी दिव्यध्वनिरूपी गंगा नदी अत्यन्त निर्मल है; क्योंकि उसमें निरन्तर अनेक प्रकार के नयों की तरंगे उठती रहती हैं।

जिसप्रकार लौकिक नदी को उसमें उठनेवाली तरंगे निर्मल रखती हैं; वे तरंगे मैल को या तो नीचे बैठा देती हैं या फिर किनारे पर फैंक देती हैं। वजनदार मैल को नीचे बैठा देती हैं और हलके मैल को किनारे पर फैंक देती हैं; उसीप्रकार जिनवाणी में उठनेवाली नयों की तरंगें जिनवाणी को निर्मल रखती हैं।

वह गंगा नदी समुद्र में गिरती है और जिनवाणी गंगा ज्ञानसागर में मिल जाती है और उसमें जगत की जनता नहाती है और अपने मैल को धोकर निर्मल हो जाती है।

यद्यपि आपकी दिव्यध्वनि २५सौ वर्ष पहले खिरी थी, पर आज भी बुद्धिमान ज्ञानी धर्मात्मा लोग उससे भलीभाँति परिचित हैं।

जिनवाणी के माध्यम से हे भगवान महावीर ! आप हमारी आँखों के सामने रहें; हमारे नयनपथगामी रहें, हमारी दृष्टि से ओझल कभी न हों - यह हमारी प्रार्थना है।

जो बात महावीराष्टक स्तोत्र के इस छन्द में कही गई है; वही बात जयमाला के छन्दों में कही गई है।

दसवाँ छन्द इसप्रकार है -

(पद्धरि छन्द)

सो तुम ही सों है शोभनीक, नातर जल सम जु वहै सु ठीक।
निज पर आतमहित आत्मभूत, जबसे है जब उतपत्ति सूत ।।१०।।

हे सिद्ध भगवन् ! यह गंगा नदी या जिनवाणी रूप सिद्धान्त गंगा एकमात्र आपसे ही सुशोभित हो रही है; अन्यथा तो क्या है मात्र पानी बह रहा है। हे भगवन् ! जब से जगत की उत्पत्ति हुई है, तभी से इस जिनवाणी गंगा का काम अपना और पर का आत्महित करना ही है; वही एक आत्महितकारी मार्ग है।

उक्त छन्द में जो **नातर** शब्द का प्रयोग पाया जाता है; वह बुन्देलखण्डी भाषा का बहु प्रचलित शब्द है; जो ग्रामीण बुन्देलखण्डी में प्रयोग किया जाता है। इस शब्द का अर्थ है - अन्यथा।

गंगा का भाव है जिनवाणी में समागत सिद्धान्त। गंगा का यदि यह अर्थ नहीं किया जाय तो फिर अन्य नदियों के समान गंगा भी बहते हुए पानी के अतिरिक्त और क्या है ? कुछ नहीं। **(क्रमशः)**

ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन में संचालित -

दैनिक कार्यक्रम

प्रातःकाल -

5.15 से 6.15	आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी का प्रवचन
6.15 से 7.00	पाठ एवं जी-जागरण पर डॉ. भारिल्ल का प्रवचन
7.30 से 8.15	विभिन्न कक्षायें (1) नयचक्र (उत्तरार्ध) - डॉ.संजीवकुमारजी गोधा (शास्त्री द्वितीय-तृतीय वर्ष) (2) तत्त्वज्ञान पाठमाला-भाग 2 - पण्डित सोनूजी शास्त्री (3) इष्टोपदेश - पण्डित अनेकान्तजी शास्त्री
8.15 से 9.00	प्रवचन : पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल - प्रवचनसार
9.00 से 9.45	आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी का सी.डी. प्रवचन एवं विद्यार्थियों द्वारा प्रश्नमंच

सायंकाल -

6.30 से 7.00	जिनेन्द्र भक्ति
7.00 से 7.30	छात्र प्रवचन (द्वितीय वर्ष द्वारा) समयसार (कर्त्ताकर्म अधिकार)
7.30 से 8.15	प्रवचन : पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील विषय - अष्टपाहुड
8.15 से 10.00	साहित्यिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम (महाविद्यालय के विद्यार्थियों द्वारा)

नोट - जो भी साधर्मी यहाँ रहकर इन कार्यक्रमों का लाभ लेना चाहते हैं, वे कार्यालय में संपर्क कर सकते हैं। सभी साधर्मीजन प्रवचनहॉल में होने वाले कार्यक्रमों का सीधा प्रसारण इंटरनेट के माध्यम से **www.ustream.tv/channel/ptst** पर देख सकते हैं।

प्रकाशन तिथि : 13 जनवरी 2014

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
सह-सम्पादक : **डॉ.संजीवकुमार गोधा**, एम.ए.द्वय (जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन; इतिहास), नेट, एम.फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी.
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
E-Mail : ptstjaipur@yahoo.com **फैक्स :** (0141) 2704127